THE ECONOMIC TIMES

Date: 18-07-16

Skill India needs concerted attention

The pace of rolling out the Skill India Mission launched by Prime Minister Narendra Modi last July needs to pick up. The government set a target of skilling 400 million persons by 2022, so far it has only skilled 10 million people. At this pace, the 2022 target appears to be a far cry. Worse still is the low rate of training to job transition.

The mission comprises four initiatives and the Pradhan Mantri Kaushal Vikas Yojana (PMKVY) is the flagship. In its first phase, the government trained some 1.97 million people against a target of 2.4 million, and the skilling to placement ratio is low. The government has stepped in to improve accountability of the scheme through a quarterly review of outcomes and direct payment systems. The Rs 12,000-crore package approved by the Cabinet for providing skill training and certifying 10 million persons over the next four years, which marks the second phase of the programme, seeks to address the gaps. In the new version of the scheme, the government will also focus on training people to work overseas, including Europe and Central Asia. But increased funding and training options alone will not help. The true test of the initiative is ensuring a smooth transition to jobs. This will require measures to incentivise

employers to offer apprentice schemes that ensure skill training programmes are in sync with industry's requirements.

India faces a severe shortage of trained workers—2.3 per cent of India's work force has formal skill training compared to 68 per cent in the UK, 75 per cent in Germany, 52 per cent in USA, 80 per cent in Japan and 96 per cent in South Korea. Success of the Make-in-India manufacturing push depends, among other things, on availability of the requisite skilled manpower. Industry councils must become more proactive, as well, in skilling potential recruits.

This piece appeared as an editorial opinion in the print edition of The Economic Times.

Date: 18-07-16

THE TIMES OF INDIA

Arunachal lesson: Return of popular government is a timely reminder to strengthen cooperative federalism

The swearing in of Pema Khandu as the 9th chief minister of Arunachal Pradesh brings an end to months of political instability in the north-eastern state bordering China. More importantly, it has foregrounded misuse of special powers by the Centre, igniting debate on quashing political appointments in gubernatorial positions. Supreme Court's

landmark July 13 ruling on Arunachal not only reiterated the sanctity of the floor test, but also makes it crystal clear that the governor cannot be seen to have such powers and functions as would assign to him a dominating position over the state executive and legislature.

Though belatedly, Congress ceded to the demand of its MLAs for replacing sitting Arunachal chief minister, Nabam Tuki, with another candidate that enjoyed the confidence of a majority within the legislature party. The elevation of 36-year-old Pema Khandu to the top job exemplifies that political leaderships cannot take decisions sitting in New Delhi without incorporating the mood among elected representatives. In a bid to steer clear, BJP insists that Congress itself has been responsible for the entire crisis. They have termed developments in Itanagar culminating in Khandu getting support of 44 of the total 60 MLAs in the assembly, as Congress's internal matter.

With the Centre's reversals in Uttarakhand and Arunachal over use of Article 356, rumblings have already begun. Bihar chief minister Nitish Kumar made a pitch for the abolition of the governor's post at the Inter-State Council meeting on Saturday. Other chief ministers too criticised the Centre for over-centralisation of power, advocating greater autonomy to states. Incidentally, the council meeting, aimed at providing better coordination between states and Centre, was held after a gap of 10 years. The time has come for the Modi government to demonstrate that it really wishes to promote cooperative federalism by consigning Article 356 to history.

दैनिक जागरण

Date: 18-07-16

आतंक की काली छाया

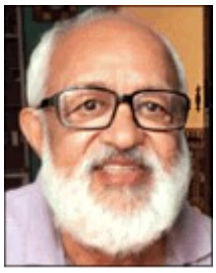

फ्रांस के नीस शहर में आतंकी हमले के बाद विश्व को और अधिक गंभीर खतरे में देख रहे हैं पुष्पेश पंत

फ्रांस पर एक बार फिर कहर बरपा और जैसी आशंका थी, यह कहर एक ऐसे आतंकी ने बरपाया जिसका या तो कोई सीधा संबंध इस्लामिक स्टेट से था या फिर जो इस खूंखार आतंकी संगठन से प्रेरित था। फ्रांस के नीस शहर में हुए आतंकी हमले में जान गंवाने वालों की गिनती 80 पार कर चुकी है। करीब 50 से अधिक गंभीर रूप से घायल हैं। यह हमला उस वक्त हुआ जब बहुत सारे लोग सपरिवार फ्रांसीसी क्रांति की एक बड़ी घटना बास्तीय के पतन का जश्न मना रहे थे और आतिशबाजी का आनंद उठाने समुद्र तट के पास जमा थे। इस आतंकी हमले को अंजाम दिया ट्यूनिसियाई मूल के फ्रांसीसी नागरिक मोहम्मद बूहलल ने। उसने अपने ट्रक से लोगों को बेरहमी से रौंद डाला। तत्काल इसका पता नहीं कि हत्यारे ने ऐसा क्यों किया, लेकिन पुलिस उसके कृत्य को आतंकी घटना ही मान रही है। बीते आठ माह में यह फ्रांस पर दूसरा बड़ा हमला है। इसके पहले नवंबर में पेरिस में 130 लोगों ने अपनी जान गवाई थीं। 1ऐसा जान पड़ता है कि दुनिया का कोई भी देश जिहादी हमले का निशाना कभी भी बन सकता है। आत्मघाती हमलावर विस्फोटकों या आटोमेटिक राइफलों अथवा अकेले खूंखार भेड़िये की तरह ट्रक से मासूमों को कुचलने का काम कर रहे हैं। वे विमान चालक के तौर पर हवाई जहाज को जानबूझकर क्रैश कराकर सुर्खियों में छाने की भी कोशिश

में हैं। नीस पर हमले के बाद फ्रांस के राष्ट्रपति ओलांद ने दोटूक कहा कि फ्रांस के राष्ट्रीय दिवस पर यह हमला उन आतंकियों ने किया जो स्वतंत्रता को खुद स्वीकार नहीं करते और न ही दूसरों को निरापद स्वाधीन जीवन बिताने देना चाहते हैं। फ्रांस में आपातकाल की स्थिति पिछले साल से ही जारी थी और इस महीने उसकी अवधि समाप्त होने वाली थी। ओलांद ने इसे अगले तीन महीने के लिए बढ़ा दिया है। उन्होंने फ्रांस के संवेदनशील स्थलों में 7 हजार और हथियारबंद टुकड़िया तैनात की हैं। सरहद की चौकीदारी के लिए भी रिजर्व सैनिक बुलाए जा रहे हैं। अमेरिकी राष्ट्रपति ओबामा ने नीस पर हमले की निंदा की तो राष्ट्रपति पद के उम्मीदवार ट्रम्प ने अपनी प्रेस कांफ्रेंस स्थगित कर कहा कि हम सभी को एकजुट होकर यह सोचना पड़ेगा कि कैसे हम इस जंग में दहशतगर्दो को निर्णायक शिकस्त दे सकते हैं? ब्रसेल्स, ओरलैंडों, इस्तांबुल, ढाका और फ्रांस पर हुए हमलों के बाद ऐसी लीपापोती संभव नहीं कि आतंक का कोई धर्म नहीं होता। यह जरूरी है कि सभी कट्टरपंथियों की बिना भेदभाव भर्त्सना की जाए और उनके साथ एक जैसा बर्ताव किया जाए। अब यह बात बिल्कुल साफ हो चुकी है कि जानलेवा महामारी की तरह जिस कट्टरपंथ का शिकार दुनियाभर के निदरेष लोग हो रहे हैं उसके संक्रमण के लिए सारे धर्म समान रूप से जिम्मेदार नहीं। सऊदी अरब से जिस आक्रामक और असहिष्णु इस्लामी कट्टरपंथ का निर्यात बरसों से होता रहा है वही बेरहम और बर्बर दहशतगर्दी के लिए सबसे ज्यादा जिम्मेदार है-चाहे इसे वहाबी इस्लाम का नाम दें या सलाफी इस्लाम का। 1बगदादी नामक शख्स ने जब नई खिलाफत की स्थापना की घोषणा की थी तो उसकी प्रेरणा के पीछे सऊदी अरब का वहाबी विषवमन ही था। विडंबना यह है कि आज सऊदी शाही परिवार को बगदादी खुद अपना प्रतिद्वंद्वी लगने लगा है। जब तक अमेरिका ने ओसामा बिन लादेन का सफाया नहीं किया था तब तक बगदादी की हस्ती नजर ही नहीं आती थी। यह याद दिलाने की जरूरत नहीं होनी चाहिए कि अलकायदा की जहरीली बेल भी सऊदी अरब ने ही बोई थी। ईराक हो या सीरिया, मिस्न हो या लीबिया, सूडान हो या अल्जीरिया अथवा यमन, लगभग पूरे मध्यपूर्व में आतंक और रक्तपात के लिए यही कट्टरपंथी इस्लामी तबका जिम्मेदार है। बहस को भटकाने-उलझाने के लिए यह तर्क दिया जा सकता है कि क्रूसेड जैसे धर्मयुद्ध का एलान तो 9/11 के बाद पूर्व अमेरिकी राष्ट्रपति बुश ने भी किया था, लेकिन इसे

भुलाया नहीं जा सकता कि वह एक भीषण हमले के बाद वाली प्रतिक्रिया थी जिसमें प्रतिशोध का स्वर मुखर हुआ था। यह तर्क भी चालबाजी ही है कि 'आहत मुसलमान' उस अन्याय के प्रतिकार के लिए हथियार उठाकर आतंकी बनने को मजबूर हुए हैं जिसे अमेरिका के सरकारी आंतकवाद ने शुरू किया। कुछ शातिर विश्लेषक यह पेंच डालने का प्रयास करते हैं कि इस्लामी जगत तो सदियों से शिया-सुन्नी की हिंसक रस्साकशी में फंसा है और उसी का लावा बहकर सबको झुलसाता रहता है। 1इस सबके साथ ही इसकी अनदेखा करना भी बेईमानी है कि जिस किसी मुस्लिम बहुल आबादी वाले देश में पंथनिरपेक्ष सरकार शासन कर रही थी या जिसका संस्कार उदार, मानवीय और सहनशील था और जहां के नौजवानों का नजरिया तरक्की पसंद और वैज्ञानिक सोच का समर्थक था उसे ध्वस्त-पस्त करने में अमेरिका ने कोई कसर नहीं छोड़ी। ऐसा उसने अपने सामरिक हितों की रक्षा के लिए अदूरदर्शी तरीके से किया। प्रारंभिक दौर में उसने सऊदी अरब का इस्तेमाल मोहरे के तौर पर किया। समय के साथ यह प्यादा मोहरा ही फर्जी बन बैठा और टेढ़ी चालें चलने लगा। 1आज कश्मीर घाटी में हम जो कुछ डोल रहे हैं उसके लिए यही नादान नुस्खा आंखमूंदकर अपनाना जिम्मेदार है कि वहां तो मुसलमानों के साथ पुलिस और सुरक्षा बल ज्यादतियां करते रहे हैं और 'इंसानियत' के आधर पर किसी भी सीमा को पार कर 'मानवीय समझौते' की जरूरत है। जो दृश्य हम देख रहे हैं उसमें ज्यादतियों का शिकार पुलिसकर्मी और अन्य सुरक्षा बलों के सदस्य दीख रहे हैं, जो असाधरण संयम से काम लेते हुए लगातार पत्थरबाजी से बमुश्किल अपनी जान बचाकर रणछोड़ वाली मुद्रा में बहादुरी दिखा रहे हैं। कश्मीर में अलगाववादी कट्टरपंथी दहशतगर्दो के कथित मानवाधिकारों के उल्लंघन की चिंता करने वाली जमात शांति और सुव्यवस्था बनाए रखने के दौरान शहीद या घायल होने वाले जवानों अथवा उनके परिवार के प्रति हमदर्दी मुखर करने में पीछे ही रहती है। 1आज जब देश में इस्लामिक स्टेट की दस्तक तेज होती जा रही है तब संकट यह है कि उत्तर प्रदेश समेत अन्य राज्यों के चुनावों और उसके बाद लोकसभा चुनावों की तैयारी में अल्पसंख्यक वोट बैंक भुनाने के चक्कर में हर दल कहीं न कहीं इस तबके के तुष्टीकरण को प्राथमिकता देगा। एक बार फिर वही बेमतलब तोतारटंत सुनने को मिलेगी कि हमें किसी भी धर्म को आतंकवाद के साथ जोड़ने की जल्दी नहीं करनी चाहिए। अगर सत्य कहने में कंजूसी की

जाएगी तो खतरे की जड़ बने वहाबी-सलाफी इस्लाम को ही बल मिलेगा। यह भी ध्यान रहे कि लगातार चुनावी तुष्टीकरण बहुसंख्यकों को असंतोष और आक्रोश से भरता है और इस मानसिकता को बढ़ावा देता है कि उन्हें न्याय नहीं मिल रहा। यहां यह याद दिलाना जरूरी है कि कश्मीर में मुसलमान अल्पसंख्यक नहीं और यदि वह आर्थिक अभाव और सामाजिक विषमता का शिकार है तो इसके लिए उनके सहोदर एवं समानधर्मा खुदगर्ज कुनबापरस्त नेता जिम्मेदार हैं।

(लेखक जेएनयू में अंतरराष्ट्रीय संबंधों के प्रोफेसर रहे हैं)

दैनिक भास्कर

Date: 18-07-16

जहां प्रसन्नता है विकास का अनूठा पैमाना

गूगल में 'भूटान' टाइप करें और स्क्रीन पर इस आशय के सैकड़ों लेख आ जाएंगे, 'ऐसी बादशाहत खोजें, जहां खुशी का साम्राज्य है।' 'किंगडम ऑफ ड्रेगन' आज धरती का सबसे प्रसन्न और संतुष्ट देश माना जाता है। किंतु खुशी, प्रसन्नता है क्या? विकिपीडिया कहता है, 'प्रसन्नता अच्छा लगने की मानसिक या भावनात्मक अवस्था है, जिसे संतुष्टी से लेकर तीव्र उल्लास तक की कई सकारात्मक या खुशनुमा भावनाओं से परिभाषित किया जाता है।' बात यह है कि कोई परिभाषा बच्चे के चेहरे की मुस्कान की जगह नहीं ले सकती, निसंदेह खुशी परिभाषा के :

परे है। आकार में छोटे से राष्ट्र ने पूरी दुनिया को'वैश्विक प्रसन्नता' से परिचित करा दिया। सकल राष्ट्रीय प्रसन्नता ग्रॉस नेशनल हैपीनेस), जीएनएच की अवधारणा (1972 में भूटान के चौथे राजा जेश्मे सिंग्ये वांगचुक ने गढ़ी थी। यह सही है कि सदियों से भूटान की संस्कृति सकल घरेलू उत्पाद वाले भौतिक विकास की बजाय जीवन की गहरी समझ पर (जीडीपी) आधारित रही है।

यह एक ऐसे सम्राट की प्रतिभा का चमत्कार था, जिसने शायद भविष्य को देख लिया था। जब थिम्पु ने भूटान की संतोष की संस्कृति को संरक्षण देने वाली अर्थव्यवस्था विकसित करने का संकल्प लिया तो उस वक्त प्रसन्नता, खुशी, संतोष जैसी बातें चलन में नहीं थीं। हिमालय की गोद में बैठे इस राष्ट्र को अब प्रायधृत किया जाता है। भूटान अंतरराष्ट्रीय सम्मेलनों में उद् : सांसारिक खबरों में भी रहता है और वह भी सही कारणों से। कैम्ब्रिज के ड्यूक व डचेस प्रसन्नता की इस धरती पर आए थे और उन्होंने दर्शनीय टाइगर लायर तक ट्रेकिंग भी की।

टाइगर लायर को भूटान की भाषा'जोंगका' में पारो तक्तसंग भी कहते हैं। मठों का यह संकुल ऊपर पारो घाटी में एक कगार पर झूलता सा प्रतीत होता है। इसे-17वीं सदी में बनाया गया था और जहां स्वात में जन्मे गुरु पद्मसंभव ने तीन साल, तीन माह और तीन दिन तक ध्यान किया था। पारो तक्तसंग उन 13 तक्तसंग गुफाओं में से एक है, जिनपर सर्वोच्च आनंद के देवता ने अपनी कृपा की है।

क्या दुनिया खुशी को समझ पाती है? कुछ सप्ताह पहले संयुक्त राष्ट्र द्वारा 156 देशों के लोगों से जुटाए आंकड़ों में आश्चर्यजनक ढंग से भूटान को खुश राष्ट्रों की सूची में बहुत नीचे, चीन से एक स्थान नीचे 84वां स्थान दिया गया। इसमें अलग पैमानों का इस्तेमाल किया गया प्रति : व्यक्ति वास्तविक जीडीपी, सामाजिक सुरक्षा, स्वस्थ जीवन जीने की अवधि, जीवन के चुनाव करने की स्वतंत्रता, उदारता अौर भ्रष्टाचार को लेकर धारणा। सूची के शीर्ष पांच देशों में डेनमार्क, स्विट्जरलैंड, आइसलैंड, नार्वे और फिनलैंड का शामिल होना बताता है कि प्रसन्नता

जांचने के पैमाने पश्चिमी मूल्यों पर आधारित है। यह बड़े दुख की बात है भारत को !118वां स्थान मिला है?

प्रत्येक देश की तुलना डिस्टोपिया से की गई है। यह एक काल्पनिक राष्ट्र है जहां मानवीय दुश्वारियां, दमन, बीमारियां, जरूरत से ज्यादा आबादी और भय का साम्राज्य है। ऐसी जगह जहां सबकुछ गलत ही है। डिस्टोपिया, यूटोपिया का उल्टा है, जो आदर्श समाज का पर्याय है, जिसमें न अपराध है और न गरीबी। पश्चिमी पूर्वग्रह के बावजूद यह देखना (अथवा समझ की कमी) रोचक है कि संयुक्त राष्ट्र ने 'प्रसन्नता' की अवधारणा का अध्ययन शुरू किया है, जो भारतीय और हिमालयीन संस्कृति के केंद्र में मौजूद है।

खुशनुमा वातावरण भूटान के प्रधानमंत्री त्शेरिंग टॉब्गे ने कनाडा के वेंकुवर में बहुत ही : प्रेरणादायक टेड टॉक यानी प्रेरणादायी वीडियो वार्ता दी। वे लैंड ऑफ ड्रेगन की विशेष संस्कृति, सकल राष्ट्रीय प्रसन्नता की इसकी अवधारणा, जलवायु परिवर्तन, पर्यावरण और सबको मुफ्त शिक्षा पर धाराप्रवाह बोले। उन्होंने कहा, 'दुनिया में जो 200 प्लस देश हैं, ऐसा लगता है कि उनमें केवल हम ही हैं, जो कार्बन न्यूट्रल हैं यानी अतिरिक्त कार्बन पैदा नहीं कर रहे हैं। वास्तव में ऐसा कहना भी एकदम ठीक नहीं है, क्योंकि भूटान कार्बन न्यूट्रल ही नहीं, कार्बन निगेटिव है।' 'हैपी' प्रधानमंत्री ने जोर देकर कहा, 'हमारी कार्बन न्यूट्रल रणनीति के केंद्र में हैं हमारे संरक्षित क्षेत्र। ये लगातार कार्बन हटाते रहते हैं। वे हमारे फेफड़े हैं। आज आधे से ज्यादा हमारा देश राष्ट्रीय उद्यानों, राष्ट्रीय संरक्षित क्षेत्र और वन्यजीव अभयारण्यों के रूप में संरक्षित है।'

प्रसन्नता के स्तंभ भूटान ने :'प्रसन्नता' के चार स्तंभ बताए हैं। टिकाऊ विकास, सांस्कृतिक मूल्यों का संरक्षण और उन्हें प्रोत्साहन, प्राकृतिक पर्यावरण को संरक्षण और अच्छे शासन की स्थापना। डीएनएच आधिकारिक रूप से भूटान की पंचवर्षीय योजना प्रक्रिया का हिस्सा है, जो देश के आर्थिक विकास का मार्गदर्शन करती है।

अब जब दुनिया मुड़कर पीछे की गई गड़बड़ को देख रही है तो कई लोगों को लग रहा है कि जीएनएच शायद इतनी नादानी की बात भी नहीं है। पेरिस कॉन्फ्रेंस के अंत में यूरोपीय संघ ने जलवायु परिवर्तन से निपटने की भूटान की 'असाधारण महत्वाकांक्षा' को सम्मान दिया। प्रसन्नता अब यूटोपिया नहीं है, भूटान को प्रायधृत किया अनुकरणीय उदाहरण के रूप में उद् : जाता है।

क्या भूटान के धनी होते जाने के साथ 'प्रसन्नता' को और अधिक संपदा के लिए पृष्ठभूमि में डाल दिया जाएगा? यदि रिपोर्टों पर भरोसा करें तो जल्द ही लैंड ऑफ ड्रैगन पर बांध बनाने वाली कंपनियों का राज होगा। जब 'विकास' ही वैश्विक देवता है तो क्या समाज 'प्रसन्न' रह सकता है? अब यह सब भूटान पर निर्भर है, लेकिन महत्वपूर्ण बिंदु यह है कि 'प्रसन्नता' की अवधारणा पूरी दुनिया में स्वीकार की गई है। टोब्गे ने कहा, 'जैविक गलियारों से जानवर पूरे देश में घूमने के लिए स्वतंत्र हैं।' वहां दुनिया में सबसे ज्यादा व्हाइट बैलिड हेरन बगुले की) है। इसे एक अंतरराष्ट्रीय वर्कशॉप में स्वीकार किया गया। रॉयल सोसायटी फॉर (खास किस्म प्रोटेक्शन ऑफ नेचर ने हेरन के संरक्षण पर यह वर्कशॉप की थी। अब भूटान में दुनिया के 47 फीसदी हेरन पाए जाते हैं। पहले यह 14 फीसदी थे।

कभीमसंभव संयुक्त राष्ट्र के पैमाने पर कहां ठहरते। उन्हें सामाजिक कभी मैं सोचता हूं कि पद्-सुरक्षा नहीं थी, उनके पास वाईफाई नहीं था-, परिवहन के साधन नहीं (आकाश गमन के अलावा) थे, कोई घर नहीं था (भुत सुंदर नज़ारे दिखते हैंहालांकि तक्तसंग से अद्), लेकिन उनकी गुफा आज भी प्रसन्नता से आवेशित है। क्या यह खुशी टिकेगी, यह एक अलग सवाल है।

क्लॉड अ◌ार्पी

फ्रांस में जन्मे भारत में बसे पत्रकार, इतिहासकार और तिब्बत विशेषज्ञ